साहित्य संहिता
Available at http://sahityasamhita.org/

ISSN 2454-2695
Volume 02 Issue 8
August 2016

महाभारत का ऐतिहासिक महत्व और डॉ.रामविलास शर्मा

डॉ०आनन्द कुमार यादव

नाम -डॉ०आनन्द कुमार यादव **जन्म**- 07 जून1979

पिता - श्री लच्छ्मी प्रसाद **माता**- श्रीमती ललता

शिक्षा- एम.एससी., बी.एड.,एम.ए.,पीएच.डी.(NET)

संप्रति - सहायक समन्वक(अध्यापक) BRC कमासिन, बांदा (उ०प्र०) 210125

डॉ. शर्मा ने महाभारत को इतिहास और आख्यान (मिथक) दोनों का समष्टि रूप माना है। आधुनिक पाश्चात्य इतिहास–दर्शन में इतिहास को मिथक से दूर रखा गया है और इनकी यह मान्यता है कि मिथक अतिरिक्त होंने के कारण इतिहास के अंग नहीं हैं। अतः इतिहास का आरम्भ उस समय से होता है, जब उसके लिखित प्रमाण सामने आते हैं ये अलिखित रूप भी क्रमशः आगे लिखित रूप मे प्राप्त होते हैं। यहाँ तक कि पुरातत्व के सील, मिट्टी के पात्र, ढूहे, सिक्के आदि भी किसी न किसी रूप मे इतिहास के किसी युग की जानकारी देते हैं। अतः डॉ. शर्मा का यह मत कि ''महाभारत आधुनिक अर्थ में इतिहास नहीं है, पर इतिहास की धारणा में मिथक और इतिहास दोनों का योग रहा है, अतः भारतीय–दृष्टि से महाभारत इतिहास है, इसका प्रमाण वे दर्शनशास्त्र से देते हैं कि जैसे दर्शनशास्त्र मे दो धाराएँ दिखायी देती हैं एक यथार्थवादी और दूसरी भाववादी, वैसे ही महाभारत में इतिहास सम्बन्धी दो धाराएँ दिखाई देती हैं, यथार्थवादी और भाववादी।''[1] इसी के साथ डॉ. शर्मा ''यथार्थवाद के अन्तर्गत विकासवादी धारणा को महाभारत में स्थान देते हैं और दूसरी ओर संसार को अपरिवर्तनशील मानने वाली धारा की एक विचारधारा यह कि आरम्भ मे केवल एक ही वर्ण था अर्थात् समाज वर्णहीन (गण–व्यवस्था), और आगे चलकर कर्मगुण के अनुसार अनेक वर्ण बने कोई वर्ण शुद्ध नहीं है, अतः वर्ण–संकरता सामान्य रूप से सामाजिक नियम है। दूसरी विचारधारा यह कि इन चार वर्णों को ईश्वर ने बनाया है जो सनातन काल से चले आ रहे हैं। ब्राह्मण और क्षत्रिय अन्य वर्णों से श्रेष्ठ हैं। सामाजिक विकास की दृष्टि से, समाज की भिन्न अवस्थाएँ महाभारत में यदा–कदा दिखाई देती हैं, पर यह कहना कठिन है कि इतिहास के किस काल खण्ड में ये घटित हुईं। यही कारण है कि

साहित्य संहिता
Available at http://sahityasamhita.org/
ISSN 2454-2695
Volume 02 Issue 8
August 2016

इतिहासकार गोविन्दचन्द पांडे का कहना है कि महाभारत की सांस्कृतिक–सामाजिक परम्परा की दृष्टि से वह लगभग 400 ई. पू. से लेकर 600 ई. तक हजार साल की अवधि में फैली हुई है।''[2]

महाभारत की मूलकथा एक ही गण–समाज के दो कुटुम्बों की संघर्ष गाथा है पर इन दो कुटुम्बों (कुरू व पांड्व) से उस समय के बहुत से समाज जुड़ गए थे। इस तरह वह दो विशाल गण–समुदायों का युद्ध हो गया था। चिन्तामणि विनायक शास्त्री ने इन गण समुदायों के बारे में कहा है कि ''दुर्योधन की ओर कुरूक्षेत्र से लेकर पंजाब के गांधार, कम्बोज (अफगानिस्तान), सिंध तथा काठियावाड तक के राजा, पूर्व में कोशल, अंग के राजा तथा दूसरी ओर पांड्वों की ओर से दिल्ली, मथुरा, पांचाल, मगध, काशी आदि के राजा इस महासमर में सम्मिलित थे। इस संघर्ष में श्री कृष्ण की सहायता से मध्यदेश के जनपदों की विजय हुई जो अन्तर्जनपदीय महत्व की है। हड़प्पा सभ्यता के ह्रासकाल के बाद मध्यदेश केन्द्रित जिस संस्कृति का विकास हुआ, उसे युद्ध में मध्यदेश के जनपदों की विजय ने संभव बनाया था।''[3]

जहाँ इतिहास की दृष्टि से यह काव्य महत्वपूर्ण है, वहीं काव्य की दृष्टि से कम महत्वपूर्ण नहीं है। जनपदों के युग में 'सभा' एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था थी जिसमें लोग अन्यों को प्रभावित करने के लिए 'वक्तृत्व–कला' का उपयोग करते थे। इन वाद–विवादों को काव्य के स्तर तक पहुँचा देना बहुत बड़ा कौशल था। महाभारत में ऐसे पात्रों की कमी नहीं है जो इस वक्तृत्व–कला में दक्ष न हों। यही बात हम 'सुकरात' के सन्दर्भ में पाते हैं कि वह वक्तृत्व–कला मे इतना प्रभावी था कि जनता उसके भाषणों को बड़े मनोयोग व प्रेम से सुनती थी। द्रौपदी, भीष्म, द्रोण, अर्जुन आदि ऐसे ही पात्र हैं, पर दूसरी ओर पात्रों को परे हटाकर कवि स्वयं कुछ कहता है, वहाँ पर भी वक्तृत्व का कौशल दिखाई देगा। ऐसा लगता है कि महाभारत ऐसे कवियों की रचना है जो वक्तृत्व–कला में दक्ष हैं। छोटे से अनुष्टुप में जो प्रवाह दिखाई देता है, वह इन कवियों की वक्तृत्व कला का सूचक है। ये कवि धारा प्रवाह भाषण करते हैं, इसलिए एक श्लोक जहाँ समाप्त होता है, दूसरा वहाँ आरम्भ हो जाता है और पाठक को इसका अनुभव भी नहीं होता है। अप्रासंगिक अंश हटा दिया जाए तो महाभारत में नाटकीयता के गुण शुरू से अन्त तक दिखाई देंगे। अधिकांश पात्रों में गहराईयाँ हैं जो ऊपर से संघर्ष और कर्म में लगे रहते हैं, पर अन्तर में कोई न कोई द्वन्द्व उनमें चलता रहता है। गीता से पहले और बाद में अर्जुन को बराबर यह व्यथा रहती है कि उसने राज्य के लिए अपने सगे–सम्बन्धियों को मारा। अर्जुन के गुरू श्रीकृष्ण भी अपने गण की आन्तरिक कलह से पीड़ित हैं। काव्य की दृष्टि से महाभारत में जहाँ–जहाँ पात्रों पर देवत्व आरोपित किया गया है वहाँ पर चित्रण में कमजोरी आई है। भीष्म, कृष्ण, द्रोण आदि में देवत्व को हटा दें तो वे मानव के संघर्षरत् बिम्ब लगते हैं।

महाभारत के काव्यत्व गुण को सकेन्द्रित करने के बाद डॉ. शर्मा भीष्मपर्व में 'गीता' वाले अंश को उत्कृष्ट दार्शनिक काव्य की संज्ञा देते हैं और साथ में यह भी कहते हैं कि गीता महाकाव्य का एक अंश है और इसी रूप में उसे देखना उचित है। अतः मेरे विचार से गीता का महत्व दार्शनिक रूप में भी है और काव्य के रूप में। एक बात जो मुझे सोचने को विवश करती है, वह यह कि युद्ध को तत्पर दोनों पक्ष कुरूक्षेत्र में डटे हैं, और ऐसी स्थिति में कृष्ण का गीता उपदेश अस्वाभाविक सा लगता है। यह अंश क्यों जोड़ा गया, इसके पीछे भागवत के एक प्रसंग को डा.शर्मा ने उद्घृत किया है ''भागवत में कथा है कि महाभारत रचने के पश्चात् व्यास को लगा कि उनका यह कार्य अधूरा है

साहित्य संहिता
Available at http://sahityasamhita.org/
ISSN 2454-2695
Volume 02 Issue 8
August 2016

उन्होंने विचार करके कहा कि मैंने अभी तक भगवान को प्राप्त करने वाले धर्मों को स्थान नहीं दिया है क्योंकि यह धर्म परमहंसों तथा भगवान को प्रिय है। अतः मेरी अपूर्णता का यही कारण न हो? फिर नारद ने व्यास से कहा कि आपने धर्म आदि पुरुषार्थों का जैसा वर्णन किया है वैसा श्रीकृष्ण की महिमा का वर्णन नहीं किया।''[4] इससे यह लगता है कि महाभारत में पहले 'गीता' नहीं थी, भागवतों को इससे असन्तोष था कि यह बाद में जोड़ दी गयी। अतः भक्ति को समाविष्ट करने हेतु गीता का प्रणयन किया गया हो, यह भी संभव है।

रामविलास शर्मा ने एक अन्य महत्वपूर्ण बात कही है। महाभारत में कृष्ण का द्वारिका वाला रूप प्रमुख है जबकि भागवत में द्वारिका नेपथ्य में हैं, और केन्द्र मे मथुरा है। महाभारत में कृष्ण का द्वारिका वाले रूप में ईश्वरत्व या देवत्व का रूप अल्पतम् है। आदि पर्व में जब श्रीकृष्ण पहली बार पांड्वों से मिलते हैं, तब वे अपना परिचय युधिष्ठिर को इस प्रकार देते हैं कि मैं श्रीकृष्ण हूँ, यों कहकर वे राजा युधिष्ठिर के चरण छूते हैं। ऐसा ही व्यवहार श्रीकृष्ण सभापर्व में पुनः करते हैं। श्रीकृष्ण यहाँ पर नीति की बातें करते हैं न कि योग और वेदान्त की। राजसूय यज्ञ में जब जरासंध के विरोध का प्रश्न आता है, तब वे कहते हैं कि महाराज! हम नहीं जानते मृत्यु कब आएगी और यह भी मैंने नहीं सुना कि युद्ध न करने के कारण कोई अमर हो गया है। अतः नीतिशास्त्र में बताई नीति के अनुसार वीर–पुरुष शत्रुओं पर आक्रमण करें। डॉ. शर्मा का मत है कि ''यह गीता के स्वर से नितान्त भिन्न है यहाँ वे क्योंकि मृत्यु के बारे में जो बात करते हैं, वह 'गीता' में वैसी नहीं है। कृष्ण की यह युद्ध नीति कौटिल्य के अर्थशास्त्र की याद दिलाती है। गीता में युद्ध–नीति से पूरा ध्यान हटाकर सारा जोर दार्शनिक विवेचन पर है। जरासंध के अलावा कृष्ण के और शत्रु थे जैसे राजा शान्तन जिसने कृष्ण से युद्ध किया और विजयी हुआ। यह सारा प्रसंग वनपर्व में है।''[5] डॉ. शर्मा इससे निष्कर्ष यह निकालते हैं कि इस अतिमानवीय द्वारिकावासी कृष्ण और गीता के अलौकिक ईश्वर–रूप कृष्ण में बड़ा अन्तर है।

इन सब कारणों के विवेचन के बावजूद डॉ. शर्मा ''गीता के काव्य–पक्ष को महत्व देते हैं। कुरूक्षेत्र में अर्जुन युद्ध न करने के लिए अनेक तर्क देते हैं। अर्जुन ने ऐसी बातें 'गीता' से पहले और बाद में कही हैं, पर यहाँ विवाद और ग्लानि की जो गहराई दिखाई देती है, वह महाभारत में अन्यत्र नहीं दिखाई देती। कवि का नाट्य–शिल्प यहाँ चरम पर है। यहाँ कृष्ण की वाणी में नया ओज है जो इससे पहले नहीं है। यह कृष्ण की वक्तृत्व कला का नया रूप है। गीता एक ऐसा सुगठित दार्शनिक काव्य है कि इसमें जो बातें ओजपूर्ण ढंग से कही गयी हैं, वे वैदिक ऋचाओं की तरह प्रभाशाली हैं। शक्तिशाली बिम्बों द्वारा कालप्रवाह की भयावहता उदात्त स्तर पर व्यंजित होती हैं।''[6]

इस प्रकार डॉ. शर्मा ने ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनैतिक तथा काव्यात्मक पक्षों के विवेचन के द्वारा महाभारत की संरचना को एक लम्बे कालखण्ड लगभग 1000 वर्षों में विकसित होते हुए दिखाया है। यह विवेचन और मूल्यांकन ऐतिहासिक भौतिकवाद की दृष्टि से किया गया है, पर भाववाद के प्रसंगों को भी रेखांकित किया गया है। अतः इस महाकाव्य में भाववाद और भौतिकवाद दोनों का सम्मिश्रण है, पर मेरे विचार से यथार्थवाद के यह अधिक निकट है। यही कारण है कि महाभारत यथार्थ का कटुसत्य है तो रामायण आदर्श का कटुसत्य है। दूसरे शब्दों में महाभारत आज के यथार्थ के ज्यादा निकट है, महाभारत की अपेक्षा क्योंकि रामायण आदर्श पर अधिक जोर देती है।

साहित्य संहिता
Available at http://sahityasamhita.org/
ISSN 2454-2695
Volume 02 Issue 8
August 2016

सन्दर्भ

डॉ. रामविलास शर्मा–भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश–1, पृ.265
2 सं. ए.एन.जनी.–महाभारत (रिविजिटेड), पृ.21–22
3 सं. ए.एन.जनी.–महाभारत (रिविजिटेड), पृ.268–269
4 सं. ए.एन.जनी.–महाभारत (रिविजिटेड), पृ.273
5 डॉ. रामविलास शर्मा–भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश–1, पृ.275
6 डॉ. रामविलास शर्मा–भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश–1, पृ.272